दी नेहु जर्नल, वर्ष : ५, संख्या : १ व २, २००७

आधुनिक काल और मणिपुरी भाषा की कविता

प्रो. देवराज

मणिपुरी कविता के आधुनिक काव्येतिहास का प्रथम चरण 'नवजागरणकालीन कविता' के नाम से प्रसिद्ध है । यह स्पष्ट है कि नवजागरण की चेतना ऐतिहासिक परिस्थितियों की देन थी। उसके गठन और निर्माण में सामाजिक जागरण, राजनैतिक स्वाधीनता की आकांक्षा, प्रत्येक प्रकार की जड़ता से मुक्ति, मातृ-भूमि के प्रति अगाध प्रेम, नव मानवतावाद, निज भाषा के प्रति लगाव, सांस्कृतिक गौरव-बोध, आत्म-विश्वास की भावना, समाज हित के लिए त्याग व बलिदान की भावना, बुराइयों से मुक्ति का संकल्प, शोषण से मुक्ति का आग्रह, स्वस्थ मानव मूल्यों के निर्माण की चाह, सात्विक ऊर्जा के संग्रह की भावना, प्रकृति के प्रति प्रेम, लोक-जीवन के प्रति सम्पृक्ति का भाव आदि तत्वों की निर्णायक भूमिका थी । इन सभी की अभिव्यक्ति मणिपुरी नवजागरणकालीन कविता में देखी जा सकती है ।

नवजागरणकालीन मणिपुरी कविता के कवियों की संख्या कुल आठ है। इनके नाम हैं-- चिङाखम मयुरध्वज (जन्म एवं मृत्यु वर्ष अज्ञात) हिजम अङाइहल (१८९२-१९४३), ख्वाइराकपम चाओबा (१८९६-१९३०) हवाइबम नवद्वीपचन्द्र (१८९७-१९४७) अङाङबम मीनकेतन सिंह १९०६- अराम्बम दरेन्द्रजीत सिं (१९०७-१९४४) और राजकुमार शीलजीत सिंह (१९१३-)। इन सभी ने काव्य के साथ-साथ गद्य को भी अपनी अभिव्यक्ति का क्षेत्र बनाया।

नवजागरणकालीन कविता में पहला स्वर स्व-भाषा के प्रति लगाव के रूप में प्रकट हुआ । कवि कमल ने मणिपुरी भाषा की दुर्दशा पर आंसू बहाते हुए कहा - ''जान गया माँ तुम ही हो निर्धन पुष्प/भारत की इस वाटिका में/देखों माँ तुम्हारे अज्ञानी पुत्र/ न चढ़ा जल चरणों पर तुम्हारे/लगे हैं मरु-भूमि में तलैया खोदने में ।'' यहाँ ध्यान दिया जाना चाहिए कि कवि ने भारत को विभिन्न भाषाओं की वाटिका के रूप में कल्पित किया है और माना है कि उस वाटिका में अन्य सभी पुष्प श्री-सम्पन्न हैं, जबकि मणिपुरी भाषा-पुष्प श्री-हीन और निर्धन दिखाई दे रहा है। कवि ने भाषा की इस दुर्दशा के कारण की भी खोज की है और भाषा-गौरव से हीन लोगों को ही इसके लिए उत्तरदाई माना है । मणिपुर के इतिहास के अनुसार अठारहवीं शताब्दी में महाराजा गरीबनवाज के समय मणिपुरी भाषा पर अघोषित प्रतिबंद्ध लगा दिया गया था । उसके स्थान पर सभी कार्यों के लिए बङ्ला भाषा का प्रयोग किया जाने लगा । हम कल्पना कर सकते हैं कि इस दुस्संयोग का मणिपुरी भाषा की उन्नति पर कैसा घौतक प्रभाव पड़ा होगा। बीसवी शताब्दी के तीसरे दशक में महाराजा चूड़ाचांद ने मणिपुरी भाषा की पुनः उसका प्राचीन गौरव और पद प्रदान किया । कवि इस घटना को ऐतिहासिक मान कर कहता है-- ''बहुत दिन पश्चात/पधारी है माँ मैतै चनु/मैतै साहित्य मन्दिर में/भर चंगेरी पुष्पों से/करें अर्पित माँ के चरणों पर ।'' यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि बंगला भाषा और लिपि के प्रभुत्व के काल में मणिपुरी भाषा और साहित्य की धारा समय की रेत के नीचे भले ही चली गई हो, किन्तु उसका प्रवाह पूरी तरह रुका नहीं

था । वह तथ्य कवि के मन में आशा जगाता है और इसी के सहारे वह एक अनाम कवि का आह्वान इन शब्दों में करता है -- ''अनुगूँज भरी कोकिल तुम आ पर्वतीय घाटी में / आ बनाओ इस घाटी को निकुंज/ बनाओ प्रवहमान सूखी धारा चन्द्र नदी की / आह्वान करो इस वन में वीणापाणि का'' ।

नजजागरण कालीन कविता में दूसरी बड़ी विशेषता मातृ-भूमि प्रेम के रूप में प्रकट हुई । कवियों ने पराधीनता के विविध रूपों और उनके प्रभाव से निस्तेज हुई मातृ-भूमि की हार्दिक पीड़ा को गहरे अनुभव किया । उन्होंने अनुभव किया कि मणिपुर के गौरवशाली इतिहास की पयस्विनी पराधीनता ओर दुरदिनो के झाड़-झंखाड़ से ढक गई है, आत्महीनता की कीचड़ चतुर्दिक फैल गई है, सब आर भयावह शून्य पसर गया है कि कभी अनुपम वेगवती धारा अब केवल हृदय-प्रदेश में बहने को विवश हो गई है । कवि ने कहा-- ''कारुणिक है चन्द्र नदी के समीप का दृश्य/जंगल में बदल गया है नदी तट की / मर गई है घास भीतर तक / बहती धारा इतिहास की नीचे भूमि के / तीव्र धारा उसकी कभी । उखाड़ फेंकती ही तट के वृक्ष-गुल्म/ अब फाल्गु गंगा सी / जल-धारा तज / भीतर-भीतर हृदय के गुप्त प्रदेश में / प्रवहमान दुख की धारा चुपचाप'' । इस भाव प्रवण यथार्थ का दूसरा पक्ष वह है, जिसमें कवि ने मातृ-भूमि की सन्तानों को उनकी दायित्वहीनता और आलस्य के लिए धिक्कारा है -- ''दुख है, कहने से / निरन्तर / स्मृति में डूबने से बढ़ता दुख / प्रभु का शिवालय / क्षेत्र कर्म का / लगाओ ध्यान कर्म में / जीवन-संग्राम में / भुजा उठा लेने पर / कटेगा दुख अवश्य / आलसी तुम / जीवित रहते / भार हो अपने पर हम पर'' ।

आधुनिक ज्ञान के प्रसार और वैचारिक बदलाव ने नवजागरणकालीन कवियों का ध्यान आपसी फूट और भविष्य के प्रति उपेक्षा भाव की ओर सींचा । उन्होंने आह्वान किया कि आने वाले कल की भलाई के लिए पारस्परिक बैर-भाव विस्मृत कर देना चाहिए-- ''पक्षी अधिकांश व्यतीत करने वाले वृक्षों पर / झगड़ते परस्पर बिना कारणों के / ~~~~ बढ़ाओ भाईचारा कल की भलाई के लिए / निर्बल पाबी करो प्रयास बचने का हाथों से अबल पक्षी के / मुँह में दबा रखी फल सुबह शाम के लिए'' । इस आह्वान में आपसी फूट को मिटाने की भावना तो है ही, अंग्रेजों की फूट डालो और राज करो नीति के प्रति सावधान रहने का भाव भी है । यह ऐसा आह्वान है, जो तत्कालीन राष्ट्रीय-चेतना को पूर्णता प्रदान करता है । व्यापक दृष्टि से विचार करें तो उस जागरण का प्रभाव सभी भारतीय भाषाओं में इसी रूप में देख सकते हैं । वास्तविकता यह है कि नवजागरण के प्रभात में एक विशिष्ट राष्ट्रीयता-बोध जन्मा है । इसकी पृष्ठ-भूमि में समाज सुधार, मानवीयता, मैत्री, स्वार्थ व शोषण का विरोध जैसी प्रवृत्तियाँ विद्यमान थीं । यहाँ राष्ट्रीयता और राष्ट्रप्रेम की सदियों से चली आती रूढ़ धारणा को बहुत कुछ बदल दिया था । अब यह स्पष्ट लगने लगा था कि राष्ट्र-रक्षा और राष्ट्र-गौरव के नाम पर युद्ध करने का उतावला रहने या फिर बड़ी-बड़ी, किन्तु खोखली बातें करते रहने का नाम राष्ट्रीयता नहीं है, बल्कि उसका अर्थ है मातृ-भूमि की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, वैचारिक समृद्धि और वैज्ञानिक विकास को भरपूर प्रयास । यह तभी संभव है, जब मातृ-भूनि की सन्तानें अपने हृदय से स्वार्थ की भावना को निकाल फेंकें तथा अपने को केवल राष्ट्र सेवक के रूप में अनुभव करें -- ''रहने वाले दूर या निकट / बड़े या छोटे / विचारें मैतै चनु की हैं सन्तान/ टूट न जाए पुष्प-माला/ राष्ट्र-पुत्रों, मातृ सेवकों/ संजीवनी को स्वार्थ त्याग की / रोप

दो चारों ओर मन्दिर के / करो कामना दीर्घायु की मैतै चनु की'' । कवि की मांग ऊपर से साधारण है, किन्तु इसकी असाधारणता इस बात में है कि कवि ने स्वार्थ-त्याग को संजीवनी का नाम दिया है । स्पष्ट है कि कवि स्वार्थ भावना को मातृ-भूमि की दुर्दशा का मूल कारण मानता है ।

नवजागरणकालीन कविता में शोषण का विरोध मनोवैज्ञानिक आधार का सहारा लेकर किया गया हे । ये कवि शोषण करने वालों की आत्मा को उन्हीं के विवेक की नौका से बाँधने का प्रयास करते हैं । ये अपनी ओर से कोई विश्लेषण या निष्कर्ष प्रस्तुत न करके जनता का शोषण किस सीमा तक न्यायोचित है, जो अपने श्रम से वैयक्तिक और सामाजिक जीवन को खाद-पानी प्रदान करती है । कवि ने कहा -- ''सोचो कपड़े लिपटे कमर पर / और पहने हुए शरीर पर / फल हैं किस व्यक्ति के पसीने के । वाणी की सामर्थ्य / और बुद्धिमत्ता / है किस व्यक्ति के कारण / लिखाया-पढ़ाया / बनाया सामाजिक/ मानूँ इसे सत्य / नहीं जानते कायदे-कानून / हैं से तिहर प्राणी / क्या करें इनका शोषण''।

आध्यात्मिक चेतना और ईश्वर पर विश्वास नवजागरणकालीन कविता की मूल विशेषताओं में से एक है, किन्तु जागरण की चेतना के प्रभाव में इस विशेषता में व्यक्ति-चेतना का समावेश भी हो गया है । इन कवियों का व्यक्ति समूची आध्यात्मिक और दार्शनिक सत्ता के सामने अपने अस्तित्व की महत्ता प्रतिपादित करता है । परम्परागत पग-पग पर व्यक्ति की रक्षा करता है, व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की सिद्धि के लिए उसी पर निर्भर है, जबकि व्यक्ति यह सोचता है कि इस धारणा से बंध जाना अपनी प्रकृत स्वतन्त्रता और स्वाभाविक सत्ता पर आघात है । नवजागरणकालीन कवि इस संकट से जूझे हैं और उन्होंने इसका मार्ग भी तलाशा है । ये कवि ईश्वर की सत्ता को नकारने में विश्वास नहीं रखते, किन्तु उसके समक्ष व्यक्ति को भी दीन-हीन भिक्षुक का स्तर प्रदान नहीं करते। वे मानते हैं कि व्यक्ति ईश्वर से ही शक्ति प्राप्त करके अपने आत्म-विश्वास के बल पर जीवन के संकटों का सामना करेगा । अपने दृढ़ संकल्प के सहारे वह अकेला ही संघर्ष में कुछ कर अपने को ईश्वर का योग्य दास सिद्ध करेगा -- ''आने दो कष्ट में अनेक / दो शक्ति करूँगा सामना / न आना तुम कभी रक्षा को / पुकारें, है योग्य वह दास तुम्हारा'' ।

नवजागरणकालीन मणिपुरी कविता के ताने-बाने में लोक-चेतना का रंग अलग ही दिखाई देता है । महाकवि अङाइहल ने उस काल में ''खम्बा-होइबी शेरेङ ''नामक लोक-महाकाव्य रचा था । इसकी रचना ''पेना गायन शैली'' ओर ''पयार'' नामक लोक छन्द में की गई है और यह प्रसिद्ध लोक-प्रेमाख्यान ''खम्बा-थोइबी'' की गाथा पर आधारित है । इसकी भाषा काव्य-रचना की सर्वोत्तम लोक भाषा है , जिसमें लोक जीवन की सरस गंध बसी है । इस लोकगाथा के आधार पर कुछ कवियों ने काव्य प्रतीक भी निर्मित किए हैं । इसका एक उदाहरण इस प्रकार है -- ''पि-थादोइ पि-थादोइ / थादइ थादोइ पि-थादोइ / किसके लिए दीवाना / घोड़े पर हो सवार भाग जाने वाली / इकलौती थादोइ/ नहीं दिखेगी फिर आँखों से / जा पहुँची खुमन के यहाँ / चली गई प्रियतम के पास / त्याग दो देखने की आशा'' । इस लोक-गाथा में थोइबी नायिका, सम्बा नायक और नोइ बान खलनायक है । नोइ बान साम, दाम, दण्ड, भेद से नायिका को पाना चाहता है, किन्तु वह मिलती है नायक को ही । कविसत्य है कि नोङ. बान मृत्यु के बाद पक्षी बन गया और जंगल-जंगल पि-थदोइ, पि-थादोइ स्वर में थेइबी को पुकारते हुए उड़ने लगा । इस पुकार में पि का अर्थ है, प्रिय

और थादोइ का अर्थ है, थोइबी । इस प्रकार खलनायक नायिका थोदोइ को पुकार रहा है । कवि द्वारा सम्पन्न प्रतीक संरचना न केवल काव्य में लोक-तत्व के समावेश का परिचय देती है, बल्कि लोक-गाथा में व्याप्त प्रेम और विरह का संकेत भी करती है । इस प्रतीक का प्रयोग नवजागरण काल के कई कवियों ने किया है ।

इन सब विशेषताओं के साथ नवजागरणकालीन कविता में मानवतावाद और व्यक्तिगत प्रेम के मिश्रण से एक विशिष्ट आभा का सृजन किया गया है । इन कवियों के अनुसार सच्चे प्रेम की कसौटी इस प्रकार है -- ''स्वर्ण हार प्रेम का/ उतार कर गले से प्रिय के / पहना सके जो शत्रु को / कहलाता व्यक्ति वही सच्चा प्रेमी'' । यह नवजागरणकालीन मणिपुरी कविता के उदात्त संस्कृति चरित्र की सच्ची गवाही है ।

नवजागरणकालीन मणिपुरी कविता का प्रारम्भ कवि कमल के सन् १९२९ में प्रकाशित ले परेइ. (पुष्प माला) शीर्षक काव्य-संग्रह से हुआ था । इसके पश्चात इस नवीन चेतना की अभिव्यक्ति करने वाले जो काव्य-ग्रंथ प्रकाश में आए, उनमें से कुछ प्रमुख हैं -- शेरेङ अनोबा (मयुरध्वज), शीडे.ल इन्दु, खम्बा-थोइबी शेरेङ, शेरेङ खंरा अङाइ.हल थाइनगी लैराइ. (कवि चाओबा), तोनु लाइजिङ लेम्बी (नवद्वीपचन्द्र), वसन्त शेरेङ विदास आशीर्वाद, अशेबगी जय भाई (मीनकेतन), कंस वध, सुभद्रा हरण (दरेन्द्रजीत) और केतुकी, इखोलाङबा, वाल्मीकि, शकुन्तला (शीतलजीत) आदि ।

मणिपुरी नवजागरणकालीन कविता पर बंगला कविता का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित किया जा सकता है । रवीन्द्रनाथ ठाकुर और माइकेल मधुसूदन दत्त के काव्य ने मणिपुरी कवियों को विशेष रूप से आकर्षित किया । दूसरी ओर वैष्णवी चेतना के प्रसार के कारण ये कवि गीता से भी प्रेरणा लेते रहे । कर्म की जो पुकार इनकी कविताओं में मिलती है, वह मुख्यतः गीता की ही देन है । नवजागरणकाल की कविता पर संस्कृत और असमीया के प्रभाव को भी नकारा नहीं जा सकता ।

मणिपुरी भाषा की ''आधुनिक कविता'' का प्रारम्भ एलाङबम नीलकान्त सिंह की सन् १९४९ ई. में प्रकाशित कविता ''मणिपुर'' से स्वीकार किया जाता है । यह कविता इस प्रकार है -- ''रथ-यात्रा की शाम / घण्टी, छन्ना, मृदंग के स्वरों के साथ / जय जगन्नाथ, जय जगन्नाथ / छा जाता मणिपुर में चारों ओर / मणिपुर के आकाश में / कलुष-दद्वेष भरे हृदय से निकल डाँट-फटकार की अवाज़ / काला चमकीला प्रोपेगण्डा / कांगरेस, सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट, प्रजा शान्ति / हिंसा, अहिंसा, राज-सिंहासन / किधर है मार्ग / अन्तर कथनी और करनी के मध्य / नहीं जुड़ते परस्पर गन्तव्य और मार्ग / महत्त्व अधिक आदर्श से व्यक्ति का / पूछती तुम माँ मैतै लेमा / आवारूढ़ थोइबी राजकुमारी का / क्वाक्ता के मन्द समीर ने / कर दिया खंण्डित कौमार्य-चिह्न/ लाइ हराओबा का नृत्य / कोमल दैहिक-मुद्राएँ / बाँसुरी का मनहर स्वर/ मृदंग की विस्मयकारी गमक में विस्मृत जगत / देखते आए हम मैते का रास-नृत्य/ याद है माँ मणिपुर ?/ देखती तुम्हारी सन्तानें फिर भूल गई / अब रुद्र का ताण्डव-नृत्य/ धरा को उलट देने वाले नटराज शिव का / प्रलय-संकेत, फट जाएगी धरती माँ / निर्दोष, जीवन पर्यन्त दुखी / खो जाएगी सत्य स्वरूपा सती सीता/ क्या समाधिस्थ हुई माँ महात्मा गाँधी के साथ ?/ आह ! देखने की कोशिश करती तुम माँ की आग / मन का पावन

आकाश / सुना है, देखा है तुमने / एटम बम का धमाका, वज्र भखकर / शोले और धुआँ काले पर्वत से ऊँचा / रशिया में जार का अत्याचार, रक्तपान/ बन्दी, निर्वासित हजारों लोगो को, फिर कम्युनिज़्म/ स्टालिन/ चमकते अपराह्न में बेपरवाह क्रन्दन/ लोमड़ियों का झुण्ड एशिया और अफ्रिका के / आकाश में उड़ते गिद्धों का झुण्ड/ लहराता झण्डा यू. एन. ओ. में / हाफ पास्ट गाँधी के देहान्त पर / शोक व्यक्त करते हैं वे / मानव जाति की एक हानि / पर माँ तुमने तो छोड़ दी उस घाट पर हिंसा के/ स्वार्थ के, पार्टी-पोलिटिकल के / शकुन्तला की स्मृति-मुद्रिका / भुला दिया तुम्हारी सन्तानों ने / तुम्हें माँ मैते लेमा / खोजेंगे एक दिन तुम्हारे बच्चे तुम्हें / बहते आँसुओं के साथ / अनुताप पीड़ित दुष्यन्त / उस वक्त तुम कहाँ, कहाँ, माँ कहाँ । स्पष्ट है कि इस कविता की केन्द्रीय संवेदना नवजागरणकालीन कविता की केन्द्रीय संवेदना से नितान्त भिन्न है । यहाँ सामाजिक-सांस्कृतिक धरातल पर विद्यमान मूल्य संकट मुख्य है । साथ ही इसमें हृदय की वह व्याकुलता भी मौजूद है, जिसकी उत्पत्ति द्वितीय विश्व युद्ध की भयावहता के गर्भ से हुई । उस काल में व्यक्ति के भीतर समाजार्थिक और समाज-राजनैतिक सन्दर्भों से जुड़ी विसंगतियाँ ने जो जलते हुए सवाल सुलगा दिए थे, उनकी अनुगूँज भी नीलकान्त की इस कविता में साफ सुनी जा सकती है । आधुनिकता बोध की आन्तरिक चेतना तो इसमें है ही । अपने समय और अपने आप को ऐतिहासिक पौराणिक सन्दर्भों के परिप्रेक्ष्य में देखने-समझने और भीतर ही भीतर अपने आप से जूझने की व्याकुलता इस कविता की अतिरिक्त विशेषता कही जाएगी । कमोबेश आधुनिक कविता का यही केनवस है ।

ऐसा नहीं कहा जा सकता कि मणिपुरी काव्य में यह बदलाव १९४९ में अचानक आ उपस्थित हुआ था । इसकी पृष्ठभूमि सन् ३९-४० से ही उभरनी शुरू हो गई थी । उस काल में राजनैतिक और वैचारिक धरातल पर जो परिवर्तन आया, उसने मणिपुरी जीवन में संक्रमण की स्थिति को जन्म दिया । आगे चलकर इसी संक्रमण की परिणति आधुनिक कविता के रूप में सामने आई । यह लगभग वैसे ही हुआ, जैसे हिन्दी कविता के क्षेत्र में प्रयोगवाद और नई कविता के सन्दर्भ में माना जाता है । वास्तविकता यह है कि मणिपुरी कविता में आधुनिक चेतना और प्रगतिशील मूल्यों को न लाने की व्याकुलता पहले-पहल जन नेता हिजम इरावत की कविताओं में आई । अंग्रेजों ने सन १९४० में राजद्रोह का आरोप लगा कर इरातव को इम्फाल सेण्ट्रल जेल में बन्द कर दिया था । वहाँ से उन्हें सिल्हट जेल में स्थानान्तरित कर दिया गया । वहीं उनका सम्पर्क प्रसिद्ध साम्यवादी ज्योतिर्मय नन्दी और कांगरेसी वीरेश मिश्र से हुआ । इन दोनों के सानिध्य में इरावत का वैचारिक काया-कल्प हुआ । वहीं रहते हुए हिजम इरावत ने ४२-४३ के काल में नवीन भाव-बोध की कविताएँ रचीं । इन कविताओं में फाँसीवाद का घोर विरोध, किसान-मज़दूरों का जीवन यथार्थ, जीवन की वस्तुगत सच्चाई के धरातल पर विकसित प्रेम, व्यक्ति मन की अकुलाहट, असीम प्रश्नाकुलता और वैचारिक संघर्ष के व्यापक चित्र विद्यमान हैं । इरावत की विभिन्न कविताओं में जीवन के अन्तर्बाह्य रूपों, नारी, नगर, आकाश, पृथ्वी, खेत, किसान, सड़क पर्वत, झील, युद्ध की दहशत, एकाकीपन का दंश देखा जा सकता है । इरावत की ये कविताएँ सम्मोहन पैदा नहीं करतीं, बल्कि व्याकुलता पैदा करती हैं और बुद्धि को सक्रिय बनाती हैं । इरावत की इन कविताओं का प्रकाशन ''इमागी पूजा'' नाम से १९८७ में हो सका, किन्तु यह कहना असंगत न होगा

कि रचना-काल की दृष्टि से आधुनिक कविता की पृष्ठभूमि में इनकी समर्थ भूमिका को नकारना संभव नहीं है । इस प्रकार सन् १९४२-४३ के काल में जो व्याकुलता जन्म लेने लगी थी वही १९४९-५० के काल में आधुनिक कविता के रूप में ढल गई ।

आधुनिक कविता के प्रारंभिक शलाका पुरुषों में एलाङबम नीलकान्त सिंह के साथ ही लाइश्रम समरेन्द्र का भी नाम लिया जाता है । इन दोनों कवियों ने नए बौद्धिकतावादी परिवर्तन को स्पष्ट रूपाकार दिया, जिसके प्रभाव में कविता परम्परागत मोह या कल्पनाजन्य आदर्शबोध से हट कर यथार्थ के मार्ग पर चलने को सन्नद्ध हुई । उसने उन शैलियों को नकारा, जिसमें बंध कर शब्द किसी राजा के मुकुट के चमकते हुए मोती तो हो जाते हैं, किन्तु उनसे प्राणवत्ता की आशा नहीं की जा सकती । अब कविता ने रचना की ऐसी शैलियों और मुद्राओं को अपनाया, जिनके सहारे वह चारों ओर से दबाव डालने वाली परिस्थितियों से घिरे मनुष्य का सच्चा चित्र खींच सके । यहाँ एक तथ्य की ओर संकेत करना आवश्यक है । वह यह कि मणिपुरी कविता द्वारा पुरातन मूल्यों के नकार को सही सन्दर्भ में देखा जाना चाहिए । इसका कारण यह है कि यह कविता प्राचीन काल से चली आती उन मान्यताओं को छोड़ने की बात करती है, जिनके चलते मनुष्य अपना वर्तमान देखने और विवेकपूर्ण ढंग से उसका विश्लेषण करने में अक्षम हो जाता है ।यह कविता उस मोह से भी मुक्त होना चाहती है, जो आधुनिक जीवन के अनिवार्य परिवर्तन को हेय दृष्टि से देखने तथा उससे बच कर पुरानी झोंपड़ी में बन्द रहने को बाध्य करता है । किन्तु यह कविता उस आधुनिक संचेतना को खोना नहीं चाहती, जो मनुष्य को उसके विकास के पूर्वापर से जोड़े रखती है । अक्सर ऐसा भी लगता है कि मणिपुरी भाषा की आधुनिक कविता उपयोगी प्राचीन मूल्यों के साथ-साथ "मणिपुरीनेस" को भी लेकर चलना चाहती है । सामान्य दृष्टि से यह पुनरुत्थानवादी मूल्य लग सकता है, किन्तु भीतर से यह आधुनिकता के अन्य मूल्यों जैसा ही जीवन्त और आवश्यक है, क्योंकि इसके अभाव में पूरी कविता के समक्ष अपनी जमीन से कट जाने का संकट खड़ा हो सकता है ।

आधुनिक कविता की इस यात्रा में काङ जम पदम कुमार, राजकुमार मधुवीर, एलाङबम दीनमणि सिंह, सुमनथेम प्रकाश, युमलेम्बम इबोमचा, हुइद्रोम राधाकान्त, एन. ज्योतिरीन्द्र लुवाइ. इबेम पिशक, कयामुद्दीन पुखीमयुम, सनख्या इबोतोम्बी, रतन थियाम, श्रीबीरेन, रंजीत डबल्यू, राजकुमार भुवनसना आदि ने अपने-अपने ढंग से योगदान किया। इसी के साथ सिजगुरुमयुम नीलवीर शास्त्री और एलाङबम सोनामणि सिंह जैसे कवियों ने नवजागरणकालीन चेतना तथा आधुनिकताबोध के मिलेजुले रूप को एक अलग धारा के रूप में प्रस्तुत किया । जो कवि पूरी तरह आधुनिक बोध के पक्षधर थे, उन्होंने वैचारिक जड़ता को ध्वस्त करने के लिए ज्वलन्त विषय वस्तु और धारदार भाषा को कविता के लिए अनिवार्य घोषित किया । यही कारण है कि इनकी कविता संकट ग्रस्त मनुष्य की सच्ची प्रवक्ता के रूप में सामने आई । इन कवियों ने जिस भाषा को प्रमुखता दी, उसी से आगे चल कर मणिपुरी कविता 'जन-भाषा के मुहावरे वाली कविता' बन सकी और सामान्य आदमी के अधिक निकट आ सकी ।

आधुनिक कविता ने अपने राजनीति सम्बन्धी चिन्तन का भी विकास किया । सन् १९४९ में मणिपुर स्टेट कांगरेस बनी थी । यहाँ उसी ने सत्ता की बागडोर संभाली। मणिपुर के राजनैतिक

वातावरण में कमोबेश वही विशेषताएँ पननीं, जो नेहरू के नियन्त्रण में भारत की केन्द्रीय राजनीति में पनप रही थीं । व्यक्ति-पूजा और राजनीति के व्यावसायीकरण की प्रवृत्ति इस प्रदेश के लोगों में भी साफ-साफ दिखाई देने लगी । इससे जो जन-असन्तोष पनपा, उसे कविता ने अभिव्यक्ति प्रदान की । उसने राजनीतियों के चरित्र को विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से जनता के सामने उभारा । कई कवियों ने राजनीति के विकृत रूप को प्रकट करने के लिए पुराण और इतिहास का सहारा भी लिया, जैसे -- ''मंत्री रामायण पढ़ रहे है / बुद्ध की शरण में जा रहे हैं / मैं भगवत पढ़ रहा हूँ / शरण में आई कमजोर टिड्डी की / हत्या हो रही है गीत गोविन्द से दब कर'' ।

जैसे-जैसे सामाजिक और राजनैतिक वातावरण अधिक विस्मय होता गया, आधुनिक कविता का स्वर अधिक कठोर और व्यंग्य भरा होता गया । उसी अनुपात में कविता की भाषा भी कठोर और सीधी मार करने वाली बनती गई । यह वही काल था, जब मोहभंग के कारण समग्र भारतीय कविता एक नए तेवर को अपनाने का संकेत कर रही थी ।

सन् १९६० के काल में मणिपुरी कविता ने एकदम नए दौर में प्रवेश किया । इसमें कविता की यात्रा यथार्थ से अति यथार्थ की ओर प्रारम्भ हुई । इस बड़े परिवर्तन का श्रेय मोहभंग, धार्मिक प्रतिक्रिया और पाश्चात्य कविता के प्रभाव को अधिक है । चीन के साथ युद्ध में भारत की पराजय ने सभी भारतीय भाषाओं की कविता में मोहभंग का विस्फोट किया था, फिर मणिपुरी कविता ही उससे कैसे बच सकती थी । चीन के हाथों जो पराजय इस देश को झेलनी पड़ी, वह वस्तुतः सैनिक पराजय उतनी नहीं थी, जितनी हमारे राजनैतिक दिवालिएपन के द्वारा आमन्त्रित पराजय । इस घटना ने हमारे राष्ट्रीय राजनैतिक जीवन पर प्रश्न चिह्न लगा दिया । उधर जनता का दैनन्दिन जीवन निरन्तर कठोर से कठोर होता चला गया । बेरोजगारी, आर्थिक भ्रष्टाचार, पूँजी का कुछ हाथों में सिमटते जाना, सामाजिक स्तर पर एक काले शून्य का अधिकार आदि ने जनता को निराश से भी भरा और आक्रोश से भी । इससे साधारण जनता और राजनीति का रिश्ता अविश्वास भरा हो गया तथा जनता यह सोचने लगी कि उसने जिन लोगों को अपने जन कल्याणकारी सपने को पूरा करने का दायित्व सौंपा है, वे उसके प्रति न संकल्पबद्ध हैं और न इच्छा शक्ति सम्पन्न । वे केवल वाग्वीर हैं, कर्मवीर नहीं । यह धारणा जन-चेतना के साथ ही साहित्य एवं अन्य कला-रूपों को प्रभावित करने वाली सिद्ध हुई ।

सन् साठ के आस-पास मणिपुर में एकाएक ब्राह्मणवाद के विरुद्ध तीव्र प्रतिक्रिया प्रकट हुई और ''मीते मख्य'' आन्दोलन भड़क उठा । वस्तुतः यह आन्दोलन सन १९३० में कछार निवासी नाओरियो फुलो द्वारा शुरू किया गया था, किन्तु परिस्थितियाँ अनुकूल न होने के कारण उस समय फलफूल नहीं सका था । इस आन्दोलन के माध्यम से इस धारणा का प्रसार किया गया कि वैष्णवी परम्परा के पोषक ब्राह्मणवाद मणिपुरी समाज की हजारों वर्ष पुरानी पहचान को ध्वस्त करने वाले है । इस धारणा ने मैते धार्मिक प्रतिक्रियावाद को बढ़ावा दिया, विशेषकर युवा मानस पर इसका घोर प्रभाव पड़ा और इनमें से जो लोग साहित्य के क्षेत्र में आए उनकी रचनाओं की विषयवस्तु व संवेदना इससे अछूती नहीं रही ।

सन साठ के बाद की कविता पर पाश्चात्य कविता और चिन्तन का भी व्यापक प्रभाव पड़ा। मणिपुरी भाषा के रचनाकार एकाएक अंग्रेजी कविता और उसकी शैलियाँ की ओर आकर्षित हुए ।

मशीनीकरण, अजनबीपन, अकेलापन, मृत्यु–भय, सांस्कृतिक संक्रमण आदि जो विशेषताएँ पाश्चात्य कविता का आधार थीं, उन्हें इन कवियों ने अपनी प्रेरणा बनाया और अपना काव्य संसार निर्मित किया ।

विषय और प्रकृति के अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि साठोत्तरी मणिपुरी कविता ने जनता के भाग्य के साथ खिलवाड़ करने वाले लोगों ओर संस्थाओं के विरुद्ध हल्ला बोलने की इच्छा का प्रदर्शन किया । उसने नेताओं के भ्रष्ट व्यवहार और जन-विरोधी चरित्र पर हमले से अपनी बात शुरू की और धीरे-धीरे अपने आक्रमण की सीमा को बढ़ाया । विशेष बात यह है कि इस काल की कविता ने व्यक्ति के उस आक्रोश, असन्तोष और क्रोध को वाणी देने का प्रयास किया, जो कुव्यवस्था के कारण मानस को मथे जा रहा था , किन्तु पूर्व काल की कविता जिसकी ओर अपेक्षित ध्यान नहीं दे पा रही थी । अपने इस नए दायित्व को सफलतापूर्वक निभाने के लिए कविता ने व्यंग्य का अधिक सहारा लिया । अब कथन, भंगिमा और शिल्प में भी परिवर्तन आया । विशेष बात यह कि कविता के व्यंग्य ने केवल उन्हें ही निशाना नहीं बनाया, जो जन असन्तोष के लिए सीधे-सीधे जिम्मेदार थे, बल्कि कई बार उसने स्वयं कवियों को भी अपना निशाना बना डाला ।

साठोत्तरी मणिपुरी कविता में कुण्ठा, अनास्था और निराशा का भाव भी तीव्र रूप में अभिव्यक्त हुआ । इसके पीछे समग्र जीवन-मूल्यों में ह्रास की स्थिति जिम्मेदार थी । मणिपुरी भाषा के सन्दर्भ में यह स्थिति इसलिए और भी भयावह थी कि यहाँ की जनता के मन में अपनी सांस्कृतिक पहचान की भूख दूसरे स्थानों से कहीं अधिक थी । सभ्यता के विकास-क्रम में यहाँ के लोगों ने प्रत्येक नए चरण का मूल्यांकन पिछले आदर्शों के प्रकाश में किया । स्वाभाविक रूप से समस्याग्रस्त वर्तमान आनन्ददायी प्राचीन आदर्शों की तुलना में कहीं नहीं ठहरता था । यह स्थिति अनास्था और कुण्ठा का मुख्य कारण थी । दूसरी ओर इसे बढ़ाने में धार्मिक प्रतिक्रियावाद का भी कम हाथ नहीं था, जिसके चलते वैष्णव चेतना के पूर्ण-पुरुष काष्ठ की निर्जीव प्रतिमा के रूप में देखे जाने लगे -- ''मल से भरे प्याले में बैठ कर / एक मक्खी सोचती है / गोविन्द तो सूखी लकड़ी से बना है / कृत्रिम रंग से उसे उसके रूप में दर्शाया गया है ।

इस काल की कविता भाषा की दृष्टि से बिल्कुल नए मुहावरे की कविता है । यह पुस्तकीय भाषा के मुहावरे से अलग कामकाजी जनता की भाषा का मुहावरा है । उसे कथ्य-सम्प्रेषण के प्रति सचेत भाषा कहा जा सकता है । इस काव्य-भाषा ने व्यावहारिक शब्दावली के ग्रहण पर अधिक बल दिया है । दूसरे उसने श्लीलता-अश्लीलता की परवाह किए बिना उन शब्दों को अपनाया है, जो अक्सर क्षोभ की मनस्थिति में व्यक्ति के मुँह से निकलते हैं । कहा जा सकता है कि साठोत्तरी कविता के साथ ही साठोत्तरी काव्य-भाषा भी नए साँचे में ढली हुई है ।

साठोत्तरी कविता की समग्र हलचल ने दशक के अन्तिम वर्षों में एक नए काव्यान्दोलन को जन्म दिया, जिसे ''क्रुद्ध कविता आन्दोलन'' कहा जाता है । इस आन्दोलन के विकास के मूल में तत्कालीन कवियों की क्रुद्ध मानसिक स्थिति मानी जाती है। ऐतिहासिक दृष्टि से क्रुद्ध कविता के सूत्र थङजम इबोपिशक के कविता संग्रह ''अबाइबी थवाइ'' १९६९ और श्रीबीरेन के काव्य-संग्रह तोल्लबा शादुगी वाखल १९७० में मिलते हैं । इनमें से श्रीबीरेन ने अपने संग्रह की भूमिका में स्पष्ट

किया कि ''हम अब पहले के अर्थ में नहीं जी रहे हैं । बहुत उलझा और मशीनी जीवन जी रहे हैं। यदि हमारे खेत में इसकी अभिव्यक्ति नहीं हुई तो उचित नहीं होगा ।'' क्रुद्ध कवियों के दल ने सन १९७४ में ''शिइ.नबा'' (चुनौती) नाम से एक पत्रिका प्रकाशित की, जिसके सम्पादक और प्रकाशक थाइ.जम इबोपिशक, युमलेम्बम इबोमचा ओर रंजीत डब्ल्यू थे । इस पत्रिका के दो अंक प्रकाशित हो सके । प्रवेशांक में क्रुद्ध कवियों ने कहा -- ''क्रोध, निराश और अन्तर्दाह के मन पर पड़े प्रभाव से हमारी कला का नया स्वरूप विकसित हुआ है, कविता में एक नया स्वर और नई शक्ति का उदय हुआ है । कविता की यह शक्ति और स्वरूप बाहरी अथवा कृत्रिम परिस्थिति का परिणाम नहीं है, हमारे चारों ओर के नए समाज और जीवन की आन्तरिक सच्चाई का परिणाम है । जैसे ज्वालामुखी का लावा अवसर पाते ही फूट पड़ता है, वैसे ही कविता की यह स्वतः निर्गमित शक्ति है । ''हम अपनी कविता का विकास किसी कवि या पण्डित के सिद्धान्त पर नहीं करना चाहते । हम इसे सही भी नहीं मानते । फिलहाल हमारी कविता पर दृढ़ और निश्चित नियम लागू भी नहीं होते । व्यक्ति के जीवन की स्थिति और जीवन के आन्तरिक स्वरूप की खोज के दौरान प्राप्त अनुभवों पर चिन्तन-मनन करते हुए अपनी स्वाधीनता का बेलाग उपयोग करते हुए यथार्थ और कल्पना के सम्मिश्रण से नए ढंग की कविता का समग्रह एवं शक्तिशाली रूप प्रस्तुत करना हमारी आकांक्षा है । यही हमारी कविता का ध्येय है ।

क्रुद्ध कविता आन्दोलन का प्रारम्भ जड़ हो चुके मूल्यों और समाज को विकल्प बनाने की कोशिश करने वाली घातक विषमताओं पर कटु प्रहार से हुआ । उदाहरण के लिए, धर्म के नाम पर जो पाखण्ड उस समय फैला हुआ था, उस पर निशाना साधते हुए इन कवियों ने कहा -- ''पिचकारी के दिन आते हैं होली दल एक-एक कर / इस पर्वतीय प्रदेश की अनेक जगहों से / गोविन्द के स्वर्ण मन्दिर की ओर / हजारों भक्त कृष्ण का नाम लेकर / ढोलक-करताल की ध्वनि के साथ / अचानक लढाठी के ठोंक से / होता है भयावह विस्फोट / किधर कहाँ कहाँ/ व्याप जाती चारों ओर दुर्गन्ध / अरे ! विष्णु विष्णु हो रहा यह क्या / भक्त तेरे रचाते कैसी लीला / भगवान ! यह कैसा मार्ग भक्ति का / हजार वैष्णवियों के शरीर / गिर पड़ते आँध गोविन्द के सामने / एक कपड़ा एक तक नहीं देह पर / हजार भक्तों के हाथ / घँस जाते स्तनों के बीच / वैष्णवियों के छितराए केशों से / ढक जाते भक्तों के चेहरे'' । परम्परा प्रिय मणिपुरी समाज के पाठकों के सामने ऐसी कविता परोसना उस समय बड़े दुस्साहस का कार्य था और परम्परावादी लोगों पर इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई । क्रुद्ध कवियों को तिरस्कार और कभी-कभी घृणा की दृष्टि से भी देखा गया, किन्तु ये कवि इस स्थिति से विचलित नहीं हुए । इन्होंने अपनी कला-दृष्टि को अति-यथार्थ और नग्न यथार्थ से जोड़ा । इनका मानना था कि मध्यवर्गीय सोच के शिकार सुविधाओं के दास हैं और समाज में अपनी परम्परागत स्थिति बनाए रखना चाहते हैं । मध्य वर्ग अपनी जड़ताओं से मुक्त होने से भी डरता है, क्योंकि उसे अपनी सुविधाएँ और विशेषाधिकार छिन जाने का भय है । इसलिए कवियों को आगे आना चाहिए तथा स्वस्थ जीवन मूल्यों को स्थापना के लिए विरूपता और विसंगति को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए।

समाज की नाड़ियों में विष प्रवाहित करने वाली समस्याओं के प्रति क्रुद्ध कवियों के मन में जो क्षोभ था, उतने इनकी काव्य भाषा को सबके अधिक प्रभवित किया । क्रुद्ध कविता

आन्दोलन के काव्य की भाषा को एकदम से समस्त सीमाओं ओर मर्यादाओं से मुक्त कर दिया। सच्चाई और बेलाग अभिव्यक्ति के अधिक से अधिक निकट पहुँचने के लिए क्रुद्ध कवियों ने संस्कृति और सामाजिक मर्यादा की खोल चढ़े हुए शब्दों को अस्वीकार किया, परिणाम यह हुआ कि इनकी भाषा श्लीलता से परे तो हटी हो, कई बार अश्लीलता की हदें भी पार कर गई। वह केवल भाषा भर रह गई, ऐसी भाषा जो किसी से डरती न हो, किसी का लिहाज न करती हो कवि जब कहता है -- ''लिपिक के इण्टरव्यू में / मेरी कुँआरी छोटी बहन को गर्भवती बनाने वाले / उस अफ्सर की सुअरी की तरह मोटी बीवी के / जंघा प्रदेश को चीर दूँगा आज / चीर दूँगा नाखून से उसकी बेटी का वक्ष / और ठूँस दूँगा उसके मुँह में / अपने और उसकी बेटी के सहवास का रस / नहीं / इतना ही नहीं / मुझे धूप में सेंक कर सुखाने वाले / डेमोक्रेसी के समलैंगिकों को । लटका दूँगा उल्टा बीच बाजार / उसके बाद / खेलने दूँगा भाद्र माह के कुत्तों को उनसे'' तो काव्य भाषा का यही रूप सामने आता है । इस भाषा के कारण क्रुद्ध कवियों पर बहुत आरोप लगे, जैसे -- ये कवि अश्लील हैं, समाज विरोधी हैं, विदेशी प्रभावों से ग्रस्त हैं, असामाजिक हैं, असभ्य हैं, असफल व्यक्ति हैं, कवि ही नहीं हैं आदि । स्थिति यहाँ तक पहुँची कि कुछ अन्य कवियों और साहित्य प्रेमियों ने ऐसे समारोहों में जाने तक से इन्कार कर दिया, जिनमें क्रुद्ध कवियों की भागीदारी हो ।

नौवें दशक तक पहुँचते-पहुँचते मणिपुरी कविता ने एक और मोड़ ग्रहण किया । उस समय एक धारा उन कवियों की थी, जो मूलतः क्रुद्ध कविता के साथ काव्य क्षेत्र में वे और अपने कुछ साथियों के मृत्युबोध का शिकार होने के बावजूद अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता से मुँह नहीं मोड़ सके थे । काव्य की दूसरी धारा में वे लोग थे, जो नवजागरणकालीन काव्य-चेतना के पचासोत्तरी संस्करण के रूप में निरन्तर सक्रिय थे । इन दोनों काव्य धाराओं के अतिरिक्त इस काल में एक नई काव्य-धारा एकाएक प्रकट हुई, जिसे ''युवा कविता धारा'' नाम दिया गया। देखते ही देखते यह नवीन धारा पूर्ववर्ती धाराओं से अधिक महत्वपूर्ण और व्यापक आधार वाली बन कर खड़ी हो गई ।

''युवा कविता धारा'' का आन्दोलन और संगठित रूप मणिपुरी लिटरेरी सोसाइटी (स्थापित - १९८०) के प्रयास से उभरा । इससे पूर्व के वर्षों में मणिपुरी साहित्य परिषद्, नहारोल साहित्य प्रेमी समिति, दि राइटर्स फोरम, दि कल्चरल फोरम जैसी संस्थाओं से जो युवा कवि जुड़े थे, वे स्थानीय समाज की सांस्कृतिक पहचान, नई भाषा चेतना, राजनैतिक परिवर्तन की आकांक्षा जैसी विशेषताओं वाली धारदार कविताएँ रच रहे थे, किन्त उनके पास अपनी कविताओं के लिए कोई विशिष्ट संगठितकार्य-मंच नहीं था । इस कारण समान सोच और उद्देश्य वाले कवियों ने एक अलग संस्था बनाई । इन युवा लेखकों की विशेषता यह रही कि इन्होंने अपने आप को केवल काव्य रचना तक सीमित नहीं रखा, बल्कि सामाजिक, राजनैतिक और जन-जीवन से जुड़े अन्य क्षेत्रों में सक्रिय रूप से भाग लेने का भी निश्चय किया । युवा कविता धारा के कवियों ने मणिपुरी इतिहास पुरुषों -- टीकेन्द्रजीतवीर सिंह और थाङाल जनरल बलिदान दिवत, १३ अगस्त को सार्वजनिक साहित्य आयोजन की परम्परा की शुरुआत की, मणिपुरी भाषा की संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान दिलाने सम्बंधी जनान्दोलन में सक्रिय भाग लिया, विभिन्न जन समस्याओं के विरुद्ध जागरण

अभियान चलाया और मणिपुरी लोक-संस्कृति को संरक्षित करने के लिए लोक साहित्य पर केन्द्रित संगोष्ठियाँ कीं । यह कवि-कर्म को सक्रिय सामाजिक कर्म का हिस्सा बनाने का प्रयास था ।

१३ अगस्त १९९० को ''अशे लुप'' (कवि-सभा) नामक एक और संस्था का गठन किया गया। इसने एक ओर तो नगरों के अतिरिक्त छोटे कस्बों और गाँवों में निवास करने वाले कवियों को एक सूत्र में बाँधा तथा दूसरी ओर ''डेरेइ'' नाम से एक अर्ध वार्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया। इसके प्रवेशांक का प्रकाशन अगस्त, बानवे में हुआ और उसी में युवा कविता धारा की तेज तर्रार कवयित्री मेमचोबी का वह लेख छपा, जिसमें उसने पूर्ववर्ती कविता और युवा कविता को अलगाने वाले बिन्दुओं को व्याख्या की है । इस लेख में स्पष्ट किया गया है कि ''दूसरे महायुद्ध के बाद की -- अधिक काव्य ग्रंथ प्रकाशित न होते हुए भी, मुख्य रूप से साठ से अस्सी के बीच की कालावधि - कविता को यूरोप की आधुनिक संवेदना, अर्थात ईश्वर नहीं है, सभी मूल्य खंडित हो गए हैं, व्यक्ति और ईश्वर और व्यक्ति एवं व्यक्ति की बीच सम्बन्ध नष्ट होने से वह अकेला होकर दिशा-भ्रष्ट हो गया है आदि चिन्तन की अभिव्यक्ति ने आक्रान्त कर रखा है । इन कवियों की रचना शैली में आम आदमी के सुख-दुख तथा सामाजिक उपेक्षा के शिकार लोगों को स्थिति को साफ-साफ बयान करने का प्रयास होते हुए भी बौद्धिकता संकट विद्यमान है । ''स्पष्ट है कि युवा कवि कविता की पूर्ववर्ती परम्परा से और उसकी मुद्रा से खासे असन्तुष्ट थे । मेमचोबी ने ही आगे कहा -- ''कविता के मूल्यांकनकर्ता मानें या न मानें, अस्सी के प्रारम्भ से मणिपुरी कविता में एक धारा धूमिल रूप से बहनी प्रारम्भ हुई । यह धारा इस सदी के अन्तिम दशक में शक्तिशाली बन कर बह रही है । अस्सी के बाद का यह काव्यान्दोलन युद्धोत्तर, किन्तु असी के पूर्व की काव्य-दृष्टि से अलग है । इसकी मुख्य चिन्ता मातृभूमि मणिपुर केवल मणिपुर के प्रति लगाव और मानव जाति के परस्पर सम्मान के साथ जीने से जुड़ी है । इस दृष्टि में अपनी मातृभूमि और मानव को जीवित रखने का भाव है, एक उच्च एवं महत्वपूर्ण मूल्य की खोज का भाव ।''

स्पष्ट है कि युवा कविता धारा ने अपनी पूर्ववर्ती कविता पर आरोप भी लगाए और अपनी नवीनता की ओर ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास भी किया । इन दोनों ही पक्षों पर समीक्षा क्षेत्रों में अच्छी-खासी बहस हुई तथा सभी विचारों ने साठ से अस्सी की कालावधि की कविता पर बौद्धिक संकट सम्बन्धी आरोप को निरस्त कर दिया । स्वयं युवा कविता धारा से जुड़ कुछ लोगों ने अपने पूर्ववर्ती कवियों का मूल्यांकन करते समय उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता का महत्व स्वीकार किया । उदाहरण के लिए युवा कवि लनचेनबा मीतै ने कवि समरेन्द्र की कविता के विषय में कहा ''समरेन्द्र की अधिकांश कविताएँ मणिपुर के कलुषित समाज तथा अपनी पहचान स्थित करके कर्तव्य से पलायन करने वाले व्यक्तियों मणिपुरी लोगों के पतनशील चरित्र व दुर्बलताओं पर आधारित हैं । ''जहाँ तक द्वितीय विश्व युद्धोत्तर मणिपुरी कविता में कमल या चाओबा जैसा आकर्षण खोजने की बात है, तो यह मानना होगा कि उस युग की कविता का सौन्दर्य आज की कविता में नहीं हो सकता और यदि हम युग और परिवेश के सन्दर्भ में अपनी दृष्टि नहीं बदलते तो न तो हमें आज की कविता सुन्दर दिखाई देगी ओर न ही युवा कविता । इससे हमारी दृष्टि की जड़ता ही प्रकट होगी ।

युवा कविता धारा मणिपुरी संस्कृति और मणिपुर से गहरे लगाव सम्बन्धी दावे की अतिवादिता को आलोचना का शिकार होना पड़ा । एक समय के क्रुद्ध कवि रहे थाङजम इबोपिशक

ने एक आलेख में कहा -- ''हम मानते हैं कि हमारी नवीन कविताएँ, विशेषकर नई उम्र के युवा कवियों की कविताएँ मणिपुरी जाति की संस्कृतिक जड़ों तक नहीं पहुँच सकी ।'' यह युवा कविता धारा के किले की सबसे मजबूत दीवार पर हमला था और मानना होगा कि इसने उस अतिवाद पर काफी कुछ अंकुश लगाया, जिसके प्रभाव में कुछ युवा कवि अलगाववादी आन्दोलनों के साहित्यिक मोर्चे की अलम्बरदारी करने की दिशा में बढ़ना चाहते थे । आधुनिक कविता के प्रारम्भिक कवि नीलकान्त ने मणिपुर शीर्षक कविता रच कर मणिपुर के वर्तमान से जो जुड़ाव प्रकट किया था, उसमें अखिल भारतीय संदर्भ के साथ ही संतुलित और सांस्कृतिक चेतना का क्रमिक सन्दर्भ भी विद्यमान है । उसके सभी प्रतीक अतिवाद की सीमा से परे हैं । युवा कविता तक आते-आते इन तत्त्वों की अनुपस्थिति का आभास होने लगता है । एक युवा कवि कहता है -- ''जोर से चिल्ला रहे हैं / चिल्लाए जा रहे हैं / दुर्लभ है शङाई इस धरती पर / सङाई का जीवन बचाओ, जीने दो शङाई को / करो रक्षा सिरोउ लिलि की, है दुलर्भ पुष्प / लेकिन........ लेकिन किसी ने भी नहीं उठाई आवाज/ एक छोटी जाति के / बड़ी जाति के प्रभाव से मिटने से / बचाने के लिए / नहीं दर्शाई सहानुभूति तक'' । कविता की मूल संवेदना राष्ट्र की मुख्य धारा से मानसिक अलगाव का संकेत करती है । किन्तु यह भी सही है कि युवा कवि की यह दृष्टि हमारी चिन्ता का विषय तो हो सकती है, घृणा का नहीं । कारण यह कि हमारे लिए असहनीय यह काव्य-संवेदना यह प्रश्न भी पैदा करती है कि आखिर युवा कवियों को इस सीमा तक अतिवादी बन जाने को बाध्य करने वाले कौन-से कारण है । क्या उनमें से एक बड़ा कारण पिछले पचास वर्ष को भारतीय राजनीति नहीं है ? एक कविता के उदाहरण से बात स्पष्ट होगी -- ''खोलो दरवाजा, खोलो दरवाजा / दरवाजा जिसे कर रखा है बंद / हमारे कङ्ला वह स्थान है, जिसके बारे में पौराणिक मान्यता है कि यह जल-प्रलय के पश्चात सबसे पहले बाहर आया और सूखा । इसी कारण मणिपुर का एक प्राचीन नाम ''कङ्लेपाक'' भी है । प्राचीन काल में इसे ही राजधानी बनाया गया । इससे इस स्थान के ऐतिहासिक और उससे भी अधिक सांस्कृतिक महत्त्व को समझा जा सकता है, किन्तु स्वतन्त्र भारत में कङला में सैन्य-टुकड़ी (असम राइफल्स) का पड़ाव है । इसे सेना के अधिकार से खाली कराने के लिए बरसों से जन-आन्दोलन चल रहा है । केन्द्रीय सरकार के बड़े-बड़े मंत्री इम्फाल आकर कङला को सैन्य-मुक्त करने की घोषणा कर चुके हैं, किन्तु अभी तक कुछ नहीं हो सका । यदि भविष्य में कभी सैन्य टुकड़ी को कङ्ला से हटा भी दिया जाता हे तो पीढ़ियों तक यह सवाल जिन्दा रहेगा कि केन्द्रीय सत्तता द्वारा मणिपुरी जनता के इतिहास और संस्कृति को कुचला जाना कब बन्द होगा ? दरसल युवा कविता धारा के कवि इसी सवाल से परिचालित हैं । वे कहते हैं -- ''हैलो ! हैलो / क्या यह स्वर्ण भूमि मणिपुर है ?/ अरे, स्विटजरलैण्ड ऑफ इण्डिया / या/ वही, द ज्वेल ऑफ इण्डिया / सॉरी रॉंग नम्बर'' । युवा कविता की युवा चेतना का विश्लेषण इस प्रकार की कविताओं के जरिए किया जा सकता है । इसी के साथ एक आशाजनक तथ्य यह भी है कि युवा कवि पहचान के संकट की अभिव्यक्ति के साथ-साथ अपनी कविता को अन्य सरोकारों के करीब लाने की भी भरपूर कोशिश कर रहे हैं । उनकी कविताएँ अपने समय की वही साथी बनने की दिशा में भी बढ़ रही हैं । ऐसी ही एक कविता में कहा गया हे -- ''कहा था मैंने एक दिन/ नोङमाइजिउ. की तलहटी में। देखा चमक रही धुँधली सी रोशनी/तो/ पहुँच गए शिखर पर / तुम और मैं / देखा

शिखर से / कहाँ की रोशनी, कहाँ के जुगनु / नहीं नजर आया कुछ भी / बस, अन्धकार ही अन्धकार'' । इस अन्धकार को चीर डालना एक कठिन चुनौती है -- जनता के सामने भी और युवा कविता के सामने भी। इक्कीसवीं शताब्दी में मणिपुरी भाषा की कविता इस कठिन चुनौती से जूझने का प्रयास कर रही है ।

प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
मणिपुर विश्व विद्यालय
कांचीपुर, इम्फाल - ७९५००३
(मणिपुर)